□□□□□ □□□□

जनसत्ता 17 सितंबर, 2014: आखिर खामोश कैसे रहा जा सकता है। कुछ करना है और जल्दी करना है। हमला हुआ है।

जान-माल का नुकसान, तबाही, बेघरी, चारों तरफ बारूद का सैलाब और कीड़े-मकोड़ों की तरह जान खोते हमारे सहधर्मी और सहभागी लोग और फिर आगे सियाह अंधेरा। नहीं आगे सियाह अंधेरा नहीं। सब बर्दाश्त किया जा सकता है, लेकिन नाउम्मीदी बिल्कुल बर्दाश्त नहीं होगी। पूरी दुनिया देख रही है, जो कुछ हो रहा है। पूरी दुनिया प्रतीक्षा भी कर रही है कि अब हम क्या करेंगे।

अब हमारी बारी है। अचानक सफेद घर की दीवारों में हरकत हुई। एक देववाणी गूंजी। हम जल्द बताने वाले हैं कि हम क्या करेंगे। इंतजार और बढ़ गया। बेचैनी और गहरी हो गई।

और फिर दिन चुना गया 9/11 का। वह दिन जो पिछले तेरह वर्षों से अमेरिकी नागरिकों के दिलों में गम और गुस्से का पर्याय बना हुआ है। 'हम ढूंढ़-ढूंढ़ कर आइएसआइएस के सभी आतंकवादियों को मार गिराएंगे। वे जो हमारे देश के लिए खतरा बन गए हैं। चाहे वे सीरिया में हों या इराक में। यह अमेरिकी राष्ट्रपति पद का एक प्रमुख सिद्धांत है: अगर आप अमेरिका के लिए धमकी बने तो आप कोई सुरक्षित ठिकाना नहीं तलाश कर पाएंगे।'

उपरोक्त सारे वृत्तांत में कुछ भी ऐसा नहीं है जिसे खबरों की दुनिया में अप्रत्याशित कहा जा सके। अमेरिका इस बात को अच्छी तरह समझता है कि लोकतांत्रिक व्यवस्था में हुकूमतें अपने इकबाल पर ही चलती हैं और इससे समझौता नहीं किया जा सकता। उसे यह बात अच्छी तरह समझ में आती है कि हुकूमत से बड़ा होता है हुकूमत का इकबाल। 2014 के आम चुनाव से पहले वरिष्ठ नेता जसवंत सिंह ने (उस समय तक वे भाजपा में ही थे) एक साक्षात्कार में यूपीए सरकार की हार की भविष्यवाणी करते हुए कहा था कि इस सरकार ने अपना इकबाल खो दिया है। यह कहते हुए उन्होंने यह भी बताया कि अगर एक शब्द में हुकूमत की कामयाबी और नाकामयाबी को बताना हो तो 'इकबाल' जैसा उपयुक्त शब्द किसी और भाषा में मौजूद नहीं है। किसी भी देश की सरकार तिकड़मों से नहीं, अपने इकबाल के बल पर चलती है।

बादशाहत के जमाने में तख्तनशीं बादशाह को संबोधित करने से पहले इस शब्द का प्रयोग लगभग अनिवार्य था: 'बादशाह सलामत का इकबाल बुलंद रहे'। आजादी से पहले और आजादी के बाद कांग्रेस पार्टी का भी इकबाल हुआ करता था। गांधी और फिर नेहरू, पटेल, आजाद जैसी शख्सियतों ने हुकूमत के इस इकबाल को किसी हद तक मजबूत भी किया और हमारे लोकतांत्रिक मूल्यों की नींव को पायदार बनाया। 1971 की इंदिरा गांधी का इकबाल भी बुलंद था। विरोधी भी उन्हें दुर्गा कहने पर मजबूर थे। उर्दू के एक हरदिल अजीज शायर मुनव्वर राना के एक शेर का मजा लीजिए, फिर हम अपनी बात आगे बढ़ाते हैं। मुनव्वर राना कहते हैं- वजारत (मंत्री पद) के लिए हम दोस्तों का साथ मत छोड़ो/ इधर इकबाल आता है उधर इकबाल जाता है।

इंदिरा हुकूमत का 1971 का इक्बाल 1975 में बाल भर रह गया। दरअसल, इक्बाल उस भरोसे का नाम है, जो अवाम अपनी हुकूमत में देखता है। शाब्दिक अर्थ में जाएंगे तो इक्बाल का मतलब है स्वीकार करना, दूसरे से कहना, अंगीकार करना। लोकतंत्र की यह जिम्मेदारी है कि जनता और हुकूमत के बीच कोई परदा न हो। इमरजेंसी के दौरान इस जिम्मेदारी को मां-बेटे की हुकूमत ने इतना घिनौना बना दिया कि उन्हें दुबारा सत्ता में आने के लिए अपना चुनाव निशान गाय और बछड़ा छोड़ना पड़ा।

एक सवाल ये बातें करते समय बार-बार ध्यान खींच रहा है कि क्या इक्बाल के बगैर हुकूमत नहीं की जा सकती? बिल्कुल की जा सकती है। इसकी मिसाल पेश की नरसिंह राव ने, जो येन केन प्रकारेण पांच साल तक हुकूमत चलाते रहे और इस बीच बाजार खोलने जैसा ऐतिहासिक फैसला भी ले लिया। उससे भी पहले बिना इक्बाल की हुकूमतें दिल्ली दरबार पर काबिज रहीं। इसमें मोरारजी, चरण सिंह, वीपी सिंह, चंद्रशेखर, देवगौड़ा और इंद्रकुमार गुजराल के नाम सरेफेहरिस्त हैं। 1999 में अवाम का यह भरोसा अटल बिहारी के कंधों पर लौटा जरूर, लेकिन यूपीए-2 के पिछले पांच वर्षों में हुकूमत से इसका सफाया हो गया। सरकार का इक्बाल सात रेसकोर्स और दस जनपथ के ही चक्कर लगाता रहा और न घर का रहा न घाट का।

बहुत दूर क्यों जाना। पड़ोसी मुल्क पाकिस्तान की जिंदा मिसाल हमारे सामने है। उनकी आजादी की उम्र हमारे बराबर है या कहें हमसे एक दिन बड़ी है। लेकिन वहां न कभी लोकतंत्र मजबूत हो सका और न ही हुकूमत का इक्बाल कायम हो सका। दरअसल, वे समझ ही नहीं पाए कि हुकूमत का इक्बाल होता क्या है। वे हुकूमत के इक्बाल की जगह अल्लामा इक्बाल से ही काम चलाने की कोशिश करते रहे। जितना भी फौजियों ने उन्हें मौका दिया।

अब कुछ उम्मीद जरूर बंधी है। लोग सड़कों पर हैं। नवाज शरीफ की सरकार के खिलाफ लोकतांत्रिक आंदोलन हो रहा है। सेना ने हस्तक्षेप से मना कर दिया है। अवाम भरोसेमंद नायक की तलाश में है। जरूरी नहीं कि यह तलाश इमरान खान या कादरी पर समाप्त हो जाए। जो भी हो, वहां बदलाव की जरूरत कतार में खड़ा आखिरी आदमी भी महसूस कर रहा है, और इसके लिए तकलीफें भी उठाने को तैयार है।

आइए लौटते हैं अपने देश में। अवाम से मनमोहन सिंह की खामोशी बर्दाश्त नहीं हो पा रही थी। नित नए घोटाले और जवाब में खामोशी। शिक्षा का अधिकार, सूचना का अधिकार, भोजन का अधिकार, ये अधिकार, वो अधिकार। सरकार जनता को अधिकार पर अधिकार देती जा रही थी, लेकिन अपने लिए भरोसे का अधिकार नहीं हासिल कर पा रही थी। पराकाष्ठा यह हो गई कि हुकूमत के बजाय अण्णा और केजरीवाल में लोगों को भरोसा ज्यादा दिखा। असल में भरोसे का दर्शनशास्त्र यह नहीं देखता कि आप कितने सक्षम हैं, बल्कि यह देखता है कि आप कितने दृढ़ हैं। यह भरोसा कितना शक्तिशाली होता है इसका नमूना भी हमारी इन आंखों में देखा। भरोसे ने केजरीवाल को दिल्ली का मुख्यमंत्री भी बना दिया। भूलिएगा नहीं कि मध्य और निम्नवर्ग की सियासत करने वाले केजरीवाल को उच्चवर्ग की उन पढ़ी-लिखी महिलाओं के वोट भी मिले जिनके पति बड़े सरकारी ओहदों पर बैठे हैं। लेकिन अति उत्साह और लोकसभा पर भी झाड़ू चलाने की महत्त्वाकांक्षा में केजरीवाल और उनकी मंडली की झाड़ू जनता के भरोसे पर चल गई और आम चुनाव में उनका सफाया हो गया।

मोदी की रणनीति इस बात को समझती थी। वे देश भर में घूम-घूम कर एक ही बात कहते रहे कि मैं जनता के भरोसे को टूटने नहीं दूंगा। 'मैं देश नहीं मिटने दूंगा'। 'मैं मानता हूं कि देश बुरा नहीं है, यहां के लोग बुरे नहीं हैं, यहां की व्यवस्था बुरी नहीं है। सही नेतृत्व मिले तो सही दिशा में चल पड़ेंगे'। फिर क्या था, मिस्टर भरोसेमंद की तलाश में भटकी जनता ने मोदी को तमाम आलोचनाओं के बावजूद अपना भरोसा एक बड़ा जनादेश के रूप में सौंप दिया। एक ऐसा जनादेश जिसे गठबंधन की सियासत के दौर में बीते दिनों की बात कहा जाने लगा था।

आलोचना हो रही है। होनी भी चाहिए। लेकिन मोदी के लिए संतोष की बात यह है कि वे हुकूमत के इक्बाल को वापस लाने में कामयाब हुए हैं। मनमोहनी

दौर में आपका सरोकार □कव्यवस्था से था□ 'काम चालू आहे' जैसे अर्थ में सब कुछ चल रहा था□ क्या चल रहा था किसी को पता नहीं था□ उस दौर में व्यवस्था विदेशी दौरों पर जाती थी□ फाइलें □कदूसरे से हाथ मिला कर लौट आती थीं□

वर्तमान दौर में प्रधानमंत्री विदेशों में जा रहे हैं□ हालांकि नया कुछ नहीं हो रहा, फिर भी मोदी नए लग रहे हैं□ किसी भी तरह दिल्ली की गद्दी पाने या उसे बचाए रखने की कोशिशों में सियासत जिस चीज से गाफिल हो गई थी उसी हथियार से मोदी ने सबको परास्त किया□ शिक्षक दिवस पर मोदी देश के बच्चों से सीधे रूबरू हुए□ दिल्ली दरबार के तख्त पर नरेंद्र मोदी के बैठने से पहले लगभग पचास साल का लंबा वक्त गुजर गया□ नेहरू के बाद इन पचास वर्षों में किसी प्रधानमंत्री को यह जरूरत महसूस नहीं हुई कि वह बच्चों के करीब जाए□ आज अगर मोदी इस टूटी शृंखला को फिर से जोड़ने की कोशिश कर रहे हैं तो यह भी उस इकबाल को दुबारा कायम करने की रणनीति का ही हिस्सा है□

लेकिन इसी के साथ □कदूसरे खतरे का आभास भी हो रहा है□ सच तो यह है कि कांग्रेस जरूरत से ज्यादा कमजोर हो चुकी है□ उसे विपक्ष के नेता का पद मिल जाए□ यही बड़ी बात बन चुकी है□ इतनी कमजोर कांग्रेस भाजपा के इकबाल के लिए□ भी परेशानी का सबब बन सकती है, क्योंकि जब सियासत में मुकाबले का डर नहीं रह जाता तो उत्साह गलतियां कर बैठता है□ कभी-कभी ये गलतियां ऐसी हो जाती हैं जिन्हें सुधारा नहीं जा सकता है□ यूपीए-1 में वामपंथियों ने सरकार की नाक में नकेल का काम किया था□ लेकिन यूपीए-2 में आत्मसंतोषी नेताओं ने वे कारनामे किए□ कि जिनके कंधों पर हुकूमत का इकबाल बुलंद करने की जिम्मेदारी थी वे मनमोहन गठबंधन की दुहाइयां देते नजर आए□ आप मेरे लंगड़ाने पर आपत्ति मत कीजिए, मेरी हिम्मत देखिए कि मैं फिर भी बैसाखियों के सहारे खड़ा हूं□ कुछ इस तर्ज पर कि- हंस हंस के पी रहा हूं मैं जिस तरह अश्के गम/ जो दूसरा पिए□ तो क्लेजा निकल पड़े□ लेकिन यह बहादुरी मनमोहन सिंह के खाते में तो जा सकती है, हुकूमत के खाते में नहीं□ हुकूमत का तमगा तो उसका इकबाल है, जो बैसाखियों से हासिल नहीं किया जा सकता□

इस चश्मे से देखिए□ तो मोदी कुछ कर जाने वाले प्रधानमंत्री हैं, लेकिन उन्हें जो कुछ भी करना है वह अग्निपथ पार करना है□ रास्ता आसान नहीं है□ उत्तर प्रदेश की हुकूमत का गरिमा इकबाल हमारे सामने है□ दंगे हों या आदित्यनाथ का चुनावी प्रचार या फिर लव-जिहाद□ प्रदेश सरकार की ऊर्जा बस जनता को यह बताने भर में ही खर्च होती है कि देखिए□ जो हो रहा है हम उसके खिलाफ हैं□ जो जनता को कहना चाहिए□ है वह सरकार कह रही है□ जो सरकार को करना चाहिए□ वह कौन करेगा, कौन बताए□ मोदी इसी छद्म सियासत के विपरीत □कसियासी लकीर खींचते नजर आ रहे हैं□ उस राजनीति के सामने, जो कुछ करना ही नहीं चाहती, ताकि अच्छे और बुरे की पैमाइश ही न हो सके□

फेसबुक पेज को लाइक करने के लिए□ क्लिक करें- https://www.facebook.com/Jansatta

ट्विटर पेज पर फॉलो करने के लिए□ क्लिक करें- https://twitter.com/Jansatta